उपदेश - रत्नमाला

देहली

हिंदी

Scanned by CamScanner

हृदय की पुकार

मेरी रोग मिटा दो शरण तेरी आया हूँ।
भव दधि पार लंघा दो यह अर्जी लाया हूँ ॥ टेक

काल अनादि से कर्मों ने घेरा ।
लख चौरासी में दिया फेरा ॥
भटक भटक मिला दर्शन तेरा ।
अब न बिछोया होय बहुत अकुलाया हूँ ।

मेरा रोग मिटा दो० ॥ २ ॥

तुमने केवल ज्ञान उपाया ।
कर्मों का सब खोज मिटाया ॥
अनन्त चतुष्टय को प्रगटाया ।
दिव्य ध्वनि वरषा दो मैं पिसाया हूँ ॥

मेरा रोग मिटा दो० ॥ ३ ॥

तेरी शरण में जो कोई आया ।
उसको स्वामी पार लगाया ॥
वेद पुराणों ने यह गाया ।
'फूल सुत' की सुनो पुकार बहुत भ्रमाया हूँ ।

मेरा रोग मिटा दो ॥ ४ ॥

❀ इति ❀

सैण्ट्रल इण्डिया प्रेस, क्लौथ मार्केट देहली में छपा ।

Scanned by CamScanner

ॐ

—प्रकाशक के दो शब्द—

श्री महावीर भगवान् की असीम कृपा से आज मुझे यह सौभाग्य प्राप्त हुआ है कि मैं अपने भतीजे चिरंजीव जम्बूप्रशाद के शुभ विवाह के हर्षोपलक्ष में यह "उपदेश रत्नमाला" नाम की ग्रहस्थोंपयोगी पुस्तक सज्जनों की सेवा में सप्रेम भेंट करूँ । मुझे आशा है कि सर्व साधारण इसको पढ़कर लाभ उठावेगें। बहुधा आजकल विवाह के समय पर सेहरा भेंट करना सर्व साधारण का काम हो गया है परन्तु सिवाय इसके कि वह रद्दी की टोकरी में फैंका जावें और कुछ उपयोग उसका नहीं होता; यह जानकर मेरे बड़े भाई पूज्य कश्मीरीलालजी का विचार इस पुस्तक के रचने का हुआ कि सर्व सज्जन इससे लाभ लें । मैं सब भाइयों से विनती करूंगा कि इस पुस्तक को धार्मिक उपयोगी समझ कर इसका विनय व शिक्षा ग्रहण करें । मैं ज्ञानावर्णी कर्म के क्षयोपशमार्थ इस पुस्तक को प्रकाशित कर रहा हूँ ।

Scanned by CamScanner

वक्तव्य

प्रथम मैं श्री गुरु १०८ आचार्य परम पूज्य शान्तिसागरजी महाराज को भक्ति पूर्वक नमस्कार करके उनके दिये हुए उपदेश का संक्षिप्त संग्रह इस 'उपदेश रत्नमाला' पुस्तक में कहूँगा। जिस तरह माला में १०८ दाने होते हैं और वह भाव सहित जपने वाले व्यक्ति के इष्ट कार्य की सिद्धि करते हैं उसी प्रकार इसमें भी १०८ ग्रहस्थोपयोगी शिक्षायें विद्वानों की कहीं हुई मौजूद हैं जों कि श्रद्धान, ज्ञान आचरण पूर्वक इष्ट फल के देने वाली हैं; और साथ ही विवाह के उद्देश्य व लक्षण पर भी कुछ प्रकाश डालूँगा जिसे पढ़कर वर वधु अपने ग्रहस्थ जीवन को सुखी तथा समृद्धशाली बना सकें।

मेरे मित्र साधर्मी बाबू कीर्त्तिप्रशादजी व किशोरीलालजी ने जो इस पुस्तक संग्रह में सहायता पहुँचाई है मैं उनका आभारी हूँ अंत में मैं विद्वानों से प्रार्थना करता हूँ कि अज्ञानवश मुझ से कहीं गलती हुई हो तो क्षमा प्रदान करें।

विनीत—

कश्मीरीलाल जैन, सर्राफ

सब्ज़ीमण्डी, देहली।

Scanned by CamScanner

❀ श्रीमहावीरायनमः ❀

उपदेश रत्नमाला

ॐकारं विंदु संयुक्तं, नित्यं ध्यायंतियोगिनः ।
कामदं मोक्षदं चैव, ओंकारायनमोनमः ॥

अर्थ—चारों पुरुषार्थों की सिद्धि के लिये प्रथम जिस ॐ में पांच परमेष्ठी का समावेश है, जिसका ध्यान योगीगण नित्य किया करते हैं, उस ॐ को मैं भी सब कार्य की सिद्धि के लिये बार बार नमस्कार करता हूँ ।

१—सच्ची श्रद्धा, सच्चा ज्ञान और सच्चा आचरण इन तीनों की एकता ही मोक्ष प्राप्ति का उपाय है ।

२—जैन धर्म ही सब धर्मों में उत्तम है वह सम्पूर्ण जीवों को सुखी बनाता है, इसको यथायोग्य सब मनुष्य ऊँच नीच सब जाति धारण कर सकते हैं ।

Scanned by CamScanner

३—परमात्मा की सच्ची भक्ति ही संसार से पार उतारने वाली है जैसे समुद्र से जहाज।

४—सब शास्त्रों का सार दयाधर्म ही प्रधान धर्म कहा है उसीकी रक्षा के लिये सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य आदि कहे हैं।

५—महापापों के त्याग करने से ही दया पल सकती है। कहा भी है—

जुआ खेलना मांसमद, वेश्या विसन शिकार।
चोरी पर रमनी रमण, सातों व्यसन विसार॥

६—जुआ खेलना महा नीच कर्म है, यह सब व्यसनों का मूल है, जो इसको खेलकर धन उपार्जन करना चाहता है वह मानों घर में आग लगाकर कुशल चाहता है। जुए से धन और धर्म दोनों का नाश होता है। जुआरी को राजा दण्ड देते हैं। अनेक दुख भोगने पड़ते हैं, ऐसा जानकर जुआ खेलने का त्याग श्रेष्ठ है।

७—मांस खाने वाला महानीच है। सब जीवों को अपने अपने प्राण प्यारे हैं। बिचारे बेकसूर दीन पशुओं को कसाई मारता है। उसके दया का लेश भी नहीं है। वह नरकों में करारी सजा पाता है। जिनके मत में इसे लीन कहा है वह

Scanned by CamScanner

शास्त्र नहीं शस्त्र हैं। वह धर्म नहीं कुधर्म है। तातें मांस त्याग श्रेष्ठ है।

८—सुरापान प्रत्यक्ष आपदाओं का मूल कारण है। शराब पीने वाले की बुद्धि धर्म को धारण नहीं कर सकती। वह पापी स्त्री व मां बहन में अंतर नहीं समझता। शराब पीने वाले का जप, तप, शील सब वृथा है। नरकों का पात्र है तातें शराब का त्याग श्रेष्ठ है।

९—वेश्या सेवन महानीच कर्म है। प्रत्यक्ष देखा जाता है कि वेश्या पुरुष से प्यार नहीं करती, केवल धन से ही प्रीति करती है। नीचों के मुँह की राल तथा वीर्य का पान करती है। ऐसी वेश्या के सेवन से धन और धर्म दोनों दूर भागते हैं। यहां तो अपयश होता ही है पर भव में नरकों में अति कष्ट सहन करना पड़ता है तातें वेश्या सेवन त्याग श्रेष्ठ है।

१०—शिकार खेलना महानीच कर्म है। अपने अपने प्राण सबों को प्यारे हैं। बेगुनाह मृग आदि बन के बसने वाले भोले प्राणी को जो पापी मारता है वह दया धर्म से दूर है। नीच है, चांडाल है, नरकों में दुख पाता है, क्षत्री व वीर पुरुषों से परे है। तातें शिकार खेलने का त्याग श्रेष्ठ है।

Scanned by CamScanner

११-चोरी करना प्रत्यक्ष दुखदाई है। चोर को राजा दण्ड देता है, लोग सब मिलकर मारते हैं। चोर का विश्वास कोई नहीं करता। उसकी माँ भी उसका विश्वास नहीं करती। नरक का पात्र है तातें चोरी त्याग श्रेष्ठ है।

१२-पर स्त्री गामी के समान कोई नीच नहीं। पर स्त्रीगामी बड़ा लक्ष्मी वाला तथा बलवान भी हो तो वह लघु है उसके लज्जा व धर्म मूल से नष्ट होता है, दुनियाँ में बदनाम होता है, राजा दण्ड देता है, नरकों में दुख भोगना पड़ता है तातें पर स्त्री त्याग श्रेष्ठ है।

१३-धर्म की महिमा को कहते हैं जो धर्म संसार के दुखों से छुड़ा कर भय रहित मोक्ष स्थानमें धारण करे वही धर्म है, उस धर्म के प्रसाद से अत्यन्त दुर्लभ राज्य लक्ष्मी प्राप्त होती है और संसार के सारभूत सुख प्राप्त होते हैं व धन की प्राप्ति होती है आरोग्य शरीर मिलता है। चक्रीपद, नारायणपद, महान तीर्थंकर पद भी इसी धर्म से। मिलता है। धर्म के प्रभाव से अग्नि पानी होती है, सर्प निर्विष होजाता है, तलवार फल की माला बन जाती है, अनेक संकट दूर होते हैं, दरिद्र नष्ट होजाता है। धर्म की अचिंत्य महिमा है, तातें हर समय दया-मयी धर्म सेवन करो।

Scanned by CamScanner

१४-हिंसादि पांच पापों के त्याग से अणुव्रत होता है अणुव्रत का धारी यहाँ सुख और पर भव में देवपर्याय पाता है।

१५-त्रस हिंसा का सर्वथा त्याग करना थावर की वृथा विराधना नहीं करनी अहिंसाणुव्रत है।

१६-जिस वचन से दूसरे प्राणी को दुख पहुँचें ऐसा झूँठ बचन कभी नहीं बोलना, कठोर बचन, निंदनीय बचन का त्याग करना सत्याणुव्रत है।

१७-जल और मिट्टी को छोड़कर बिना दी हुई बस्तु ग्रहण नहीं करना अचौर्याणुव्रत है।

१८-अपनी विवाहिता स्त्री को छोड़कर समस्त स्त्री मात्र से माँ, बहन पुत्रीवत भाव रखना, स्त्रियों को स्वपति में संतोष रखना ब्रह्मचर्याणुव्रत है।

१९-अपनी शक्ति सारू परिग्रह का परिमाण करना, संतोष के साथ जीवन बिताना संतोषाणुव्रत है।

२०-माँ, बाप, भाई, पुत्र और स्त्री सब मतलब के सगे हैं। पर-गति में अपना किया ही धर्म जीव के साथ जाता है।

२१-अरब खरब की संपदा, उदय अस्तलों राज।

Scanned by CamScanner

धर्म बिना सब व्यर्थ है, ज्यों पत्थर भरा जहाज ॥
इसलिये धर्म में विशेष रुचि रखनी चाहिये ।

२२-लाठी, चाबुक आदि से मारना, रस्सी आदि से बांधना, अंग व उपांग छेदना, पशु व मनुष्यों पर उनकी शक्ति से ज्यादा बोझ लादना, अपने आधीन स्त्री, पुत्र, नौकर, चाकर पशु आदिकों का अन्न पान रोक देना, अथवा समय टाल-कर देना व कम देना। यह पाँच अतिचार अहिंसाणुव्रत के टालने चाहियें।

२३-प्रमाद से सत्यधर्म के विरुद्ध मिथ्या उपदेश देना, दूसरों की एकान्त क्रिया को जानकर दूसरों को प्रगट कर देना, झूठा लेख व बहीखाता पत्र आदि लिखना, किसी की अमा-नत को हर लेना, यह पाँच अतिचार सत्याणुव्रत के त्यागने चाहियें।

२४-चोरी करने का रास्ता बताना, बहुत कीमत की वस्तु थोड़े दाम से खरीद लेना, राजा की कानून का उल्लंघन कर महसूल आदि नहीं देना, प्रमाद से कमती तोलना व बढ़ती लेना, खरी में खोटी चीज मिलाकर बेचना, यह पाँच अतिचार अचौर्याणुव्रत के त्यागने चाहियें।

Scanned by CamScanner

२५-अपने पुत्र पुत्री को छोड़कर दूसरों का विवाह करना, किसी की परणी हुई व्यभिचारिणी स्त्रियों से सम्बन्ध रखना, बिना परणी वेश्या आदिकों से संबन्ध रखना, काम के अंग छोड़-कर कुचेष्टा करना, काम की तीव्रता रखना, यह ब्रह्मचर्याणु व्रत के पांच अतिचार छोड़ने चाहियें।

२६-क्षेत्र, मकान, दुकान, चाँदी, सोनादि, भैंस, गाय, गेहूँ चावल आदि अनाज, सेवक, सेविकाएँ, बर्तन, वस्त्र आदि दस प्रकार परिग्रह का पहिले नियम लिया था, उसमें तृष्णा के निमित्त से नियम का उल्लंघन करना यह पाँच संतोषाणुव्रत के अतिचार छोड़ने चाहियें।

२७-माया, मिथ्या, निदान यही तीन शल्य व्रत धारण में बाधक हैं इनको छोड़ो।

२८-क्रोध, मान, माया, लोभ, यह चार कषाय जीव के दुश्मन हैं इनको छोड़ो।

२९-क्रोध बड़ा बलवान है ज्ञान को नष्ट करने वाला है, क्रोध मनुष्य तथा पशु तक को अंधा बना देता है, क्रोधी बड़ों की इज्जत नहीं करता। सैंकड़ों वर्षों की प्रीति छिन में छोड़ देता है, दया धर्म को छोड़कर निर्दयी परिणाम होजाते हैं। क्रोध

Scanned by CamScanner

केवल क्षमा गुण से ही वश में होता है तातें क्रोध त्यागना चाहिये।

३०-मान कषाय जहाँ होती है वहाँ कठोर परिणाम रहते हैं। विनय गुण धारण नहीं होता, घमंड के कारण किसी की शिक्षा नहीं सुहाती, उत्तम कुल उत्तम जाति पाकर घमंड मत करो बल्कि नम्रता धारो, रूप का मद मत करो क्योंकि रूप प्रति समय बदल जाता है। धन का मद मत करो, लक्ष्मी शास्वती किसी के नहीं रही। सतपात्रों के दान में धन देने से लक्ष्मी की शोभा है। ज्ञान का मद मत करो बल्कि ज्ञान पाकर ज्ञान का दान दो। बल का मद मत करो बल्कि दीन अनाथ गरीबों की रक्षा से बल को शोभायमान बनाओ। तप का मद मत करो बल्कि तप द्वारा विषय कषाय राग द्वेष मोह को जीतो। प्रभुताई का घमंड मत करो क्योंकि यह ऐश्वर्य क्षण-भंगुर है। बड़े बड़े राजा महाराजा पाप के उदय से रंक होजाते हैं तातें मान कषाय त्यागना श्रेष्ठ है।

३१-कपट, दगाबाजी बुरी है एक दफे कपट का पता लग जावे, तो फिर उसका विश्वास कोई नहीं करता, छलकर लक्ष्मी बटोर लेना केवल पाप संचय करना है लक्ष्मी पुण्य की दासी है तातें मायाचारी त्याग श्रेष्ठ है।

Scanned by CamScanner

३२–लोभ पाप का बीज है लोभ के कारण दान देने में रुचि नहीं होती तथा अन्याय का द्रव्य लेने में मन कम्पायमान नहीं होता। लोभी को खाद्य ।अखाद्य का बिचार नहीं रहता। लोभी पांच रुपये लेकर गांव में आग लगा देता है। लोभी के दया नहीं होती। लोभी नरक का पात्र है तातें लोभ त्यागना श्रेष्ठ है।

३३–धीरज धारण करना वीर पुरुषों का उत्तम गुण है। धीरज वाला अनेक संकट उपस्थित हों तो भी घबराता नहीं। धीरज से सब साधन होसकते हैं तातें धीरज धारण करो।

३४–जिस शुभ काम को तुम कल करना चाहते हो उसे आज ही कर डालो।

३५–यदि तुम चाहते हो कि हमारी बुद्धि में धर्म रुचे तो अन्याय का धन व अभक्ष भक्षण का प्रथम त्याग करो। क्योंकि जैन धर्म सप्त व्यसन के त्याग व अन्याय के धन के त्याग तथा अभक्ष के त्याग के बिना धारण नहीं होता है।

३६–ओरा घोर बड़ा निशि भोजन, बहु बीजा बैंगन संधान।
बड़ पीपल पीलू षण ऊबर, पाकर फल जो होय अजान॥
कंद मूल माटी विष आमिष, मधु माखन और मदिरा पान।
फल अति तुच्छ तुषार चलित रस, जिनमत यह बाईस अखान

Scanned by CamScanner

यह बाईस अभक्ष त्यागने योग्य हैं।

३७-जिस प्रकार तिलों में तेल, दूध में घी, काठ में अग्नि मौजद है उसी प्रकार इस देह के मध्य अनंत दर्शन, अनंत ज्ञान, अनंत सुख, अनन्त वीर्य का धारक आत्मा बिराज रहा है।

३८-आत्मा कर्मों के बन्धन में फंस कर ही दुनियां के पिंजरे में कैद है।

३९-कर्मों के कटने पर ही जीव अनन्त सुख का भोक्ता होता है। कर्म तीन प्रकार के हैं।

४०-द्रव्य कर्म, भाव कर्म और नो कर्म—द्रव्यकर्म-ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, मोहनीय, अंतराय, वेदनी, आयु, नाम और गोत्र, घातिया अघातिया दो भेद लिये आठ प्रकार है।
भाव कर्म-राग-द्वेष दो भेद लिये हैं। नो कर्म-शरीर पांच प्रकार है।

४१-राग द्वेष के नष्ट होने पर ही वीतराग अवस्था प्रगट होती है।

४२-संसार में रहो परन्तु लिप्त होकर मत रहो, यही बुद्धिमानी है। जैसे जल में कमल, कीचड़ में सोना, वेश्या का प्यार, धाय का बच्चे को खिलाना आदि।

४३-जागो यह सोने का वक्त नहीं। तुम्हारे पीछे तुम्हारे दुश्मन बीमारी, बुढ़ापा व मौत लगे हुये है। जैसे दिन के पीछे

Scanned by CamScanner

रात व रात के पीछे शुबह, बृद्धावस्था और मृत्यु के पूर्व जो करना चाहते हो, कर डालो।

४४-संसार एक चरखी के समान है जिसे चान्द सूरज घुमाते हैं दिन और रात दोचरस दुनियांदारी के कूंए से जिन्दगी का पानी खींच कर उसे खाली करते हैं।

४५-आलस्य छोड़ो, कर्त्तव्य पिछानो क्योंकि तुम्हारी स्थिति पत्ते पर ओस के समान है।

४६-सचाई, दृढ़ता, परिश्रम और सन्तोष इनके द्वारा ही मनुष्य जीवन को सुखमयी बना सकता है।

४७-शेर को जीतना सहज है परन्तु मन की चंचलता को जीतना शूरवीरों का काम है।

४८-जिसने पांच इन्द्रियों के विषयों की आशा जीती उसे देव भी नमस्कार करते हैं।

४९-ममत्व त्यागने वाले के पाप स्वयं छूट जाते हैं।

५०-आत्म ज्ञानी पुरुषों को किसी भी प्रकार का भय नहीं रहता है।

५१-जो मनुष्य आत्मा का साक्षात्कार जान लेता है वही तत्व-वेता है।

Scanned by CamScanner

५२-संयम-मन और इन्द्रियों के वश करने पर ही होता है और वही संयमी मुनि छहों काय के जीवों की रक्षा करता हुआ अपनी प्रवृत्ति करता है। तातें संयम सहित जीवन बितावो।

५३-जिस कर्म को अज्ञानी तपस्या के द्वारा हजारों वर्ष में नष्ट करता है उसी कर्म को ज्ञानी अन्तर्मुहूर्त में नष्ट कर देता है।

५४-ज्ञानवान पुरुष सब संसार का प्यारा है, पूज्य है।

५५-वर्ष के ३६० दिन होते हैं यदि तू प्रतिदिन एक भी शुभ काम करने की और खोटे परिणाम छोड़ने की प्रतिज्ञा करले तो थोड़े ही दिन में अन्तःकरण शुद्ध होजावे।

५६-दूसरों की निंदा करने से पहले अपनी निंदा करो, बिचारो कि मैं कितने दोषों से भरा हूँ।

५७-संसार में जीवन उनका ही सुफल है जो पर उपकारी हैं। कहा भी है—

वृक्ष न फल खाते हैं, नदी न पीती नीर।
परमारथ के कारणे, संतन धरें शरीर॥

५८-सच्चे देव वही हैं जो १८ दोष भूख, प्यास, बुढ़ापा, जन्म, मरण, बीमारी, पसीन, मल, भय, गर्व, राग, द्वेष, मोह क्रोध मान, माया, लोभादि को जीतें पूर्ण वीतरागी सर्वज्ञ हितोपदेशी हों।

Scanned by CamScanner

५९-सच्चा धर्म वही है जहाँ दया को प्रधान बतलाया हो।

६०-सच्चा शास्त्र वही है जिसमें आदि से अंत तक एक ही बात कही हो, वीतरागदेव का कहा हुआ हो और जीव को उत्तम कर्मों की ओर प्रवृत्त करता हो, खोटे मार्ग का नाश करने वाला हो।

६१-सच्चे गुरु वही हैं जिन्होंने पाँचों इन्द्रियों के विषयों की आशा को जीत लिया हो और समस्त प्रकार के आरम्भ व २४ प्रकार परिग्रह के त्यागी हों और ज्ञान, ध्यान, तप में लीन रहते हों ऐसे २८ मूल गुण के धारी दिगम्बर मुनिराज ही नमस्कार करने योग्य हैं, वही सच्चे गुरु हैं।

६२-जिसने सच्चे देव, सच्चे धर्म, और सच्चे शास्त्र को नहीं जाना, उसको नेत्र होते भी महान् पुरुषों ने नेत्र हीन ही कहा है। बुद्धिमानों को यह सोचना चाहिये कि जिस देव को हम पूजते हैं वह रागी द्वेषी तो नहीं है, जिस क्रिया को हम धर्म समझ रहे हैं। उससे हिंसा की तो पुष्टि नहीं होती। जिस शास्त्र को हम धर्म शास्त्र कहते हैं उसके किसी वाक्य में पूर्वापर विरोध तो नहीं आता, जिस गुरु को हम नमस्कार करते हैं वह लोभी लालची तो नहीं है।

Scanned by CamScanner

६३-पंच इन्द्रो के भोगों से छुटकारा पाने का अर्थ यह नहीं कि तुम श्रवण, दर्शन, खान-पान आदि की शक्ति को नष्ट करदो बल्कि उसके स्वाद में मत फँसो।

६४-हे जीव ! तू विवेक सहित जीवन व्यतीत कर, न्याय से इन्च भर भी पैर बाहर न रख, चाहे लक्ष्मी मिले अथवा न मिले। संसार स्तुति करे या न करे। सैकड़ों वर्ष जीना हो अथवा मृत्यु अभी हो। सत्यात्मा को उसके स्वरूप से समझने का नाम ही विवेक है।

६५-सुख में मगन होकर कभी नहीं फूलना, दुःख में कभी नहीं घबराना चाहिये। यह तो सब जीव के पुण्य पाप का फल है, सम भाव से सदा जीवन व्यतीत करना चाहिये।

६६-सदैव सत्पुरुषों के समागम की खोज करते रहना चाहिये, सत्पुरुषों का समागम मिलना कठिन है, लक्ष्मी व पुत्र आदि तो पापी के भी होजाते हैं।

६७-जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है फिर क्यों न सत्कर्म की ओर प्रवृत्ति करें।

६८-हे जीव ! तू इस मनुष्य भव की सार्थकता को समझ, मनुष्यता मिलना बहुत दुर्लभ है, इसे पंच इन्द्रियों के विषय

Scanned by CamScanner

और स्त्री पुत्र आदि के ममत्व में वृथा न खो, इस अमूल्य रत्न को संयम में लगा।

६९-आत्मा पुरुषार्थ करे तो क्या नहीं हो सकता, इसने बड़े २ पर्वत के पर्वत काट डाले हैं, जीव दो घड़ी भी उपयोग लगावे तो केवल ज्ञान होजाये।

७०-जो बातें इस जीव को शिथिल कर डालती हैं, प्रमादी कर डालती हैं वैसी बातें सुनना नहीं, इसीके कारण जीव अनादि काल से भटक रहा है।

७१-धर्म का अनादर, उन्माद, आलस्य और कषाय यह सब प्रमाद के लक्षण हैं, इनका त्याग करना चाहिये, इनके कारण आत्मा अपने प्राप्त करे हुए स्वरूप को भूल जाता है।

७२--समय बड़ी अमूल्य वस्तु है चक्रवर्ती भी यदि एक पल पाने के लिये अपनी समस्त ऋद्धि दे दे तो उसे वह पा नहीं सकता।

७३--जो मनुष्य समय की क़दर नहीं करते अपने समय का विभाग नहीं बनाते उनका समय जुआ, शतरंज आदि खेलने में तथा भांग, तमाखु, चरस, गाँजा, अफीम आदि

Scanned by CamScanner

खाने में खोटी कहानी, किस्से, सिनेमा, थियेटर स्वांग आदि देखने में बृथा जाता है। शरीर का बल, धन, धर्म नष्ट हो जाता है इसलिये हर मनुष्य को चाहिये कि २४ घण्टे की १४४० मिनट व ८६४०० सैकिन्ड होती हैं, एक सैकिन्ड भी बृथा न खोवे हर समय विचार यह रक्खे मैं अनादि काल से संसार में भटक रहा हूँ। मैं अनन्तानत शक्ति का धारक शुद्ध ज्ञान-दर्शन वाला सिद्धों के समान हूँ। किसलिये इस प्रपञ्च में फँसा हूँ मैं अपनी शक्ति को संभालूं तो यह कर्म मेरा क्या बिगाड सकते हैं। मैं भगवान् जिनेन्द्रदेव के कहे हुए वाक्य पर चलूं तो थोड़े ही समय में कर्मों को नष्ट कर केवल ज्ञान को उपाय कर सिद्ध हो सकता हूँ ऐसे बिचार सदैव रखना चाहिये। साथ ही व्यवहार धर्म भगवान पूजन भजनादि में नित्य चौथा हिस्सा तथा छठा व दसवां तो खर्च ही कर देना चाहिये।

७४-पुरुषार्थ ऐसी वस्तु है कि जिसके बल से हम अशुभ कर्मों की प्रकृति को शुभ कर्म रूप कर सकते हैं। उनका तीव्र बल घटा कर मन्द कर सकते हैं। उनकी स्थिति बहुत काल की हो उसको थोड़ी कर सकते हैं अर्थात् पाप का फल भुगतने के पहले, पाप को पुण्य में पलट सकते हैं। मनुष्य में वह

Scanned by CamScanner

शक्ति है कि यदि वो उद्यम करे तो नीची दशा से ऊँची से ऊँची दशा तक प्राप्त कर सकते हैं। उस पुरुषार्थ के चार भेद हैं। धर्म, अर्थ, काम और क्षोम।

अब गृहस्थ के षट् कर्म कहते हैं—जिस प्रकार चक्की, चूल्हा, ओखली, बुहारी, परहेंडी, व्यौपार, बणिज के द्वारा गृहस्थ का पाप लगता है उसी प्रकार यह निम्न देवपूजादि षट् कर्म करने पर श्रावक पापों से छूट सकता है।

७४--भगवान् जिनेन्द्र देव ने श्रावकों के लिये द्रव्य शुद्धि व भाव शुद्धि पूर्वक भक्ति सहित होकर नव देवताओं की पूजन करनी बतलाई है। अर्हंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, चैत्य चैत्यालय, जिनधर्म और जिनवाणी यह नव देवता परम पूज्य हैं। जिन पूजा के बिना न तो श्रावक श्रावक ही कहलाता है न भगवान्की आज्ञा का पालन करने वाला ही समझा जाता है। पूजा करने से समस्त पाप संकट इसी लोक में नष्ट होते हैं व सर्वत्र सुख मिलता है। समस्त दरिद्रता नष्ट होती है। अतुल पुण्य संचय होता है। अतुल सुख मिलता है। समस्त

Scanned by CamScanner

अभीष्ट सम्पदा प्राप्त होती हैं। परभव में वह जीव सदा देवों के द्वारा पूजा जाता है तथा इन्द्रादिक देवों के द्वारा प्रातिहार्य विभूतियों से पूजा जाता है। तथा विदेह क्षेत्र में जन्म ले वहां तीर्थंकर भगवान् के साक्षात् दर्शन पूजन कर दिव्यध्वनि श्रवण कर तपश्चरण धारण कर कर्म नष्ट कर केवली होता है।

७५-भगवान् जिनेन्द्र देव के नित्य दर्शन वा पूजन करने का नियम प्रत्येक गृहस्थ, श्रावक, श्राविका को ले लेना चाहिये।

७६-पूजन करने से प्रथम शुद्ध छने जल से स्वयं स्नान, दन्त धोवन कर शुद्ध वस्त्र-भूषण, यज्ञोपवीत धारण कर तिलक लगा शुद्ध छने जल से जिन भगवान् की मन्त्र पूर्वक प्रतिमा को स्नान कराना तथा पंचामृत पूर्वक अभिषेक करना तथा शान्ति मन्त्र पूर्वक धारा देना आवश्यक है। फिर बड़ी भक्ति से गन्धोदक समस्त अंग में लगावो। मन, वचन, काय की शुद्धि पूर्वक आठों द्रव्य से जिनेन्द्र भगवान् की पूजन शान्त मन होकर बड़ी भक्ति व प्रभावना से करो। पूजन के पांच अंग आगम में बतलाये हैं। आह्वानन, स्थापन, सन्निधि करण, पूजा और विसर्जन।

Scanned by CamScanner

७७- जल पूजा—जन्म-मरण बुढ़ापा को नाश करती है।
७८--चन्दन पूजा—संसार के संताप को नाश करने वाली है।
७९--अक्षत पूजा—अक्षय पद को देने वाली है।
८०--पुष्प पूजा—कामादिक पापों को नष्ट करने वाली है।
८१—नैवेद्य पूजा-भूख प्यास आदि समस्त दोषों को क्षय करने वाली है।
८२—दीपक पूजा-मोहांधकार को नष्ट करने वाली है।
८३—धूप पूजा-आठों कर्मों को नष्ट करने वाली है।
८४—फल पूजा-मोक्ष फल को देने वाली है।
८५—अर्घ पूजा-मोक्ष के अनर्घ्य सुख को देने वाली है।
८६—पूजन के पीछे शान्ति पाठ बड़ी भक्ति से अर्थ समझ २ कर पढ़ना चाहिये। मंत्र शुद्ध बोलने चाहियें। समस्त विश्व में शान्ति हो यह भावना भावनी चाहिये। हे भगवान् जब तक मेरे दुष्ट कर्म नष्ट नहीं हों तब तक भगवान् जिनेन्द्र द्वारा कहा हुआ जिन आगम का अभ्यास रहे, और आपकी सदा सेवा बनती रहे, साधर्मीजनों की हमेशा संगति रहा करे, साधु संतों के गुणों का व्याख्यान करता रहूँ। पराये औगुण कहने की आदत नहीं रहे। सब से सत्य वचन सुख के देने वाला मिष्ट वचन, हितमित का उच्चारण करूं और

Scanned by CamScanner

अपने आत्मा रूपी धन की तीनों काल उपासना रखूं, समाधि मरण की भावना रखूं, यह भावना भावने से पूजन सफल होती है। बार २ बड़ी भक्ति विनय से नमस्कार करनी चाहिये। फिर पूजन में लगे दोषों को दूर करने के लिये कायोत्सर्ग करना चाहिये।

८७—गुरु की उपासना षट्कर्मों में दूसरा कर्म है। गुरु महाराज साक्षात् विराज रहे हों तो उनका स्तवन स्तोत्र पूजन करना चाहिये तथा विनववैयावृत्ति करनी चाहिये। परोक्ष हों तो उनकी आज्ञा का पालन करना चाहिये तथा चारित्र धारण कर जन्म सफल मानना चाहिये।

८८—स्वाध्याय तीसरा कर्म है—जो शास्त्र भगवान् जिनेन्द्रदेव का कहा हुआ हो पूर्वापर विरोध रहित हो, खोटे मारग का नष्ट करने वाला हो जिसका वचन वादी प्रतिवादी उल्लंघन नहीं कर सकें ऐसे चार वेद प्रतिमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग का मन, वचन, काय से पांच प्रकार स्वाध्याय करना स्वाध्याय कर्म कहलाता है।

८९—संयम चौथा कर्म है यथा योग्य स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, और श्रोत्र इन पाँच इन्द्रियों के विषय को रोकना, मनको वश करना, छह काय के जीवों की दया पालना यह संयम है।

Scanned by CamScanner

९०—तप पांचवाँ कर्म है—अनशन, अवमोदर्य, वृतपरिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्तशयनासन कायक्लेश, यह बाहर के तप हैं। श्रावकों को अपनी शक्ति प्रमाण धारण करना चाहिये। प्रायश्चित, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग और ध्यान यह अतरंग तप हैं बाहर के तप अनरंग तप के कारण हैं। इच्छा का विरोध करना हो तप का मूल है क्योंकि इच्छा ही दुखों का मूल है दुखों के दूर करने के लिये तप धारण करना आवश्यक है। तीन काल सामायिक करना येहू तप है।

९१—दान छठा कर्म है—इस दान रूपी तीर्थ को चक्रवर्ती और सार्व भौम राजाओं ने स्थापित किया है तथा अनेक प्राति-हार्यों से सुशोभित है और धर्मरूपी तीर्थ की रक्षा करने वाला है। इस दान के बिना न तो गृहस्थ धर्म चलता है न मुनि धर्म चलता है इसलिये दान रूपी तीर्थ हो इस संसार से पार करने वाला है तथा मोक्ष देने वाला है। तथा समस्त सिद्धियों का खज़ाना है। दान से तपव्रतादि सफल होते हैं। दान से पूजा होती है। दान से ही पात्रदान होता है। धर्म की प्रभावना, स्थितिकरण, वात्सल्य अंग का पालन दान से ही होता है। सम्यग्दर्शन की विशुद्धि करने वाली जिन प्रतिमाओं की, पवित्र जिनालयों की प्रतिष्ठा इस दान से ही

Scanned by CamScanner

होती है। तथा तीर्थ यात्रा महापूजा भी इसी दान से होती है। इस दान से यहाँ यश सुख अनुपम लक्ष्मी कुटुम्ब की वृद्धि, प्रतिष्ठा, अभीष्ट संपदा मिलती है। इस दान से इन्द्र नरेन्द्र, चक्रवर्ति; भोगभूमि पद अंत में जगत् पूज्य तीर्थंकर पद मिलता है। तीनों लोक में यश फैलता है--मनुष्य जन्म की सफलता दान से ही है। दान चार भेद लिये है।

९२-अन्वय दान—जिन दीक्षा धारण करने के लिये अपने पुत्र के लिये समस्त धनादिक समस्त गृहस्थी का भार समर्पण करना सो अन्वय दान कहलाता है।

९३-करुणा दान—जो जीव अपने पाप कर्म के उदय से दरिद्री हैं, दुखी हैं, रोगी हैं, अपाहज हैं, उनका दुख दूर करने के लिये दयालु निस्पृह श्रावकों के द्वारा अन्न पान औषधि वस्त्र स्थान देना है तथा पशु पक्षी को अन्न जल घास चारा आदि देना है सो करुणा दान कहा है। यह करुणा दान समस्त जीवों को अभय देने वाला है तथा जिस दान से जीवों की रक्षा हो, दुख दूर हो, पाप शान्त हो, सुख की वृद्धि हो, वह बुद्धिमान पुरुषों द्वारा करुणा दान कहा है।

९४-समदत्ति दान—वात्सल्य आदि समस्त सम्यग्दर्शन के अंगों को बढ़ाने के लिये अपने समान व्रत मन्त्र कुल चारों को तथा

Scanned by CamScanner

धर्म पालने वाले अपनी जाति वालों के लिये कन्या, गाय, भोजन, वस्त्रादि देना है सो समस्त समदत्ति दान है। इस दान के देने लेने से मोक्ष मार्ग चलता है।

९५-पात्रदान-श्रेष्ठ श्रावकों के द्वारा जो रत्नत्रय से पवित्र सुपात्रों के लिये आहार, औषधि, शास्त्र आदि पवित्र शुभदान भक्ति द्वारा देना है वह मुनियों ने महान् सुखों के देने वाला पवित्र सुपात्र दान कहा है। अथवा जिस दान से भव्य जीवों को सुख देने वाली मोक्ष मार्ग की प्रवृत्ति करने के लिये सुपात्रों को अत्यन्त निर्मल च्यार प्रकार का दान दिया जाता है वह भक्तिदान है। इस दान के प्रभाव से यहां देवों के द्वारा रत्नों आदिकी वर्षा होती है व तीनों लोकों में महान् यश फैलता है महान् सुख मिलता है सब प्रकार का कष्ट उपद्रव दूर होता है, चित्त शांत रहता है और परलोक में अवश्य ही चक्रवर्ती धरणेन्द्र, तीर्थंकर पद मिलते हैं। इसलिये आचार्य बार बार यही कहते हैं हे भव्यजीवो। उपमारहित शुभ भक्तिको धारण कर शुद्ध पात्रों के लिये संसार रूपी समुद्र से पार करने वाला समस्त कल्याणों का कारण और कर्मों का नाश करने वाला समस्त कल्याणों का कारण और कर्मों का नाश करने वाला दान अवश्य दो, दिलावो, अनुमोदना करो।

Scanned by CamScanner

जिससे परम सुख मिले।

९६-विचार करने की बातें—हम कौन हैं, कहाँ से आये हैं, अब कहाँ फँसे हुए हैं, हमारा भला कैसे होगा।

९७-आये थे किस काम को, करन लगे क्या काम ।
करना आतम काम था, धोवन लागे चाम ॥

९८-इस जीवने अनादिकाल से मोहरूपी महा मद पी रखी है उसके निमित्त से अपनी सुध भूल कर उल्टे रास्ते चल रहा है। बिना ज्ञान के व्याकुल होकर जहाँ तहाँ नीच ऊंच जगह का ख्याल नहीं करता हुआ नरकादि योनियों में भ्रमण करता दुख पा रहा है सोइ सम्यक् धारण करे बिना इस जीव की ऐसी अवस्था हुई है। तातें श्री गुरु हृदय में दया रखकर सम्यग्दर्शन धारण करने का उपदेश करे हैं।

ऐसे सम्यग्दर्शनरुपी राजा के आठ अंग होते हैं।

९९-जिनेन्द्र भगवान ने जो दिव्य ध्वनि के द्वारा जीव, अजीव, आश्रव, बंध, संबर, निर्जरा और मोक्ष, इन सात तत्वों का व्याख्यान किया है सो तत्व यही हैं, इसी प्रकार हैं, और प्रकार नहीं हैं इस प्रकार निश्चल दृढ़ श्रद्धान करने को निःशंकित अंग कहते हैं।

Scanned by CamScanner

१००-सांसारिक सुख कर्मों के बश में है वोह दुखों से मिले हुये हैं, अंत सहित हैं और पापों के बीज हैं, ऐसे सुख को दुख ही समझना निःकांक्षित अंग है।

१०१-जो शरीर स्वभाव से अपवित्र परंतु रत्नत्रय गुण से पवित्र है ऐसे मुनिराजों के शरीर में ग्लानि रहित गुणों में प्रीति करना सो निर्विचिकित्सा अंग है।

१०२-दुःखों का मार्ग जो कुदेव, कुशास्त्र, कुगुरु कुधर्म इनकी मन, वचन, काय से प्रशंसा नहीं करना सो अमूढ़ दृष्टि अंग है।

१०३-स्वयंशुद्ध जो मोक्षमार्ग है उसमें अज्ञानी पुरुषों के द्वारा लगे हुए दोष को दूर करना है सो उपगूहन अंग है।

१०४-जो सम्यग्दर्शन सम्यक्चारित्र से गिरते हों उनको पुनः सच्चे धर्म में स्थित करना यह स्थितिकरण अंग है।

१०५-साधर्मी भाइयों के साथ छल कपट छोड़ कर जैसे गऊ अपने बछड़े से प्रीति करती है वैसी प्रीति करना उसको वात्सल्य अंग कहते हैं।

१०६-अज्ञानरूपी अन्धकार को दूर करके जैसे बने तैसे भगवान् जिनेन्द्रदेव के शासन के माहात्म्य का प्रकाश करना है उसको प्रभावना अंग कहा है।

Scanned by CamScanner

१०७-इस जीव को सम्यग्दर्शन के समान तीनों लोक में और तीनों काल में अन्य कुछ भी कल्याणकारी नहीं है और मिथ्या दर्शन के समान और कोई अकल्याण करने वाला नहीं है। यह सम्यग्दर्शन आठ अंग जो ऊपर कहे हैं उन्हीं से शोभनीय है। सम्यग्दृष्टी जीव संसार में यशवान, बलवान, कुलवान, विद्यावान, विजयी, ऐश्वर्यवान होते हैं। देवों के द्वारा पूजनीक तीर्थंकर पदवी के धारण करने वाले उत्पन्न होते हैं। इस सम्यग्दर्शन की जैन शास्त्रों में अचिंत्य महिमा गाई है। तातें आचार्य उपदेश करें हैं इस सम्यग्दर्शन को आठों अंग सहित निर्दोष धारण करो।

१०८-सम्यग्दर्शन धारण कर लेने पर ज्ञानी जीव राग द्वेष को दूर करने के लिये निर्मल चारित्र धारण करते हैं उस चारित्र के प्रभाव से अनादिकाल के लगे तीन प्रकार के समस्त कर्म उनको निर्मूल कर अनंत दर्शन, अनन्तज्ञान, अनंतवीर्य, अनंत सुख जो जीवका निजगुण है उसको प्राप्त होते हैं अर्थात सिद्ध होते हैं इस प्रकार जीव को ऊपर लिखे १०८ उपदेशों का निरंतर मनन करना चाहिये।

॥ इति ॥

Scanned by CamScanner

विवाह का उद्देश्य

दो०-ऋषभदेव को बंद कर, महावीर चित लाय ।
जिनवाणी उर में धरूँ, कर्म फंद कट जाय ॥

विवाह मोक्षमार्ग का प्रवर्तक संस्कार है । आत्मशुद्धि एवं शरीर शुद्धि के लिये जो सोलह संस्कार महर्षियोंने बताये हैं उनमें विवाह संस्कार एक प्रधान संस्कार है । उसके बिना पूर्ण मोक्ष मार्ग प्रचलित नहीं होता है इसलिये भोग भूमि अवस्था में सिवाय सम्यग्दर्शन के सम्यक् चारित्र नहीं होता । रत्नत्रय का प्रादुर्भाव कर्मभूमि में ही होता है । और कर्म भूमि का आविर्भाव वैवाहिक संस्कार के कारण ही होता है । विवाह के करने से यहां मनुष्य को परम्परा रूप से परमात्मपद वहां साक्षात् रूपसे उसे अभ्युदय पद भी मिलता है । विवाह के करने से जहां मनुष्य का व्यक्तिगत हित होता है, वहां समष्टिगत हित भी होता है । जहां इसके करने से व्यक्तिगत जीवन में चारित्र बल बढ़ता है, उसमें प्रेम और संयम, त्याग और सेवा, मृदुता और मधुरता, उदारता और सहिष्णुता सरीखे उच्च भाव बढ़ते हैं वहाँ इसके करने से समाज में व्यवस्था पैदा होती है । राष्ट्र में मर्यादा स्थापन होती है और लोक में शान्ति फैलती है । इतना ही नहीं इस विवाह के करने से

Scanned by CamScanner

सदाचारी संतान पैदा होती है जो जिनेन्द्र भगवान द्वारा कहे हुए देव पूजा, दान आदि षट्कर्मों के पालन करने वाली, मुनियों को आहारादि दान देने वाली जिससे मोक्ष मार्ग क़ायम रहे। ऐसी शुभ संतान सदैव पैदा होती रहती हैं। इसीलिये इस युग के धर्म प्रवर्तक आदि गुरु श्रीआदिनाथ भगवान् ने विवाह करना स्वीकार किया था और प्रजा को विवाह का शुभ उद्देश्य **विवाह मोक्ष मार्ग का प्रवर्तक मुख्य संस्कार है** बताया था। जो लोग विवाह को सामाजिक रिवाज बताकर उसमें देश काल की परिस्थिति की दुहाई देकर उलट फेर करषा चाहते हैं और जाति भेद, वर्ण भेद, कन्या स्त्री भेद आदि की कुछ परवा न कर जो स्वल्प कालीन प्रेम की लहर में स्थायी सुख के स्वप्न देखते हैं वे लोग विवाह के महान् एवं पवित्र उद्देश्य के रहस्य से सर्वथा अनभिज्ञ हैं। इस प्रकार के विवाह न तो विवाह कोटि में आ सकते हैं क्योंकि वे आर्ष मार्ग के प्रतिकूल हैं और न वैसे क्षणिक प्रेमी गठ बन्धन से स्वपर कल्याणकारी आदर्श सन्तति बन पाती है। यह विवाह मानव संस्कृति को मनुष्य कल्याण के साधनों को, मनुष्य उद्धार के मार्गों को सदा जिन्दा रखता है। तातें धर्म गुरुवों ने विवाह को शुभ मंगल कहा है।

Scanned by CamScanner

विवाह के समय पूजा आवश्यक है।

यों तो हर शुभ कार्य की आदि में इष्टदेव का स्मरण करना जरूरी है परन्तु इस विवाह मंगल के समय जितना भी इसके उद्देश्यों को याद रक्खा जावे उन्हें भावना रूप भाया जावे, उन्हें पूर्णतया सिद्ध करने वाले महापुरुषों का गुणानुवाद किया जावे उनकी पूजा वन्दना की जावे, उतना ही थोड़ा है। यह स्मरण और स्तवन पूजन दंपति की दृष्टि को विशुद्ध रखता है, उसे इष्ट की ओर लगाये रखता है, उसे भूलों में पड़ने से बचाये रखताहै। इसीलिये विवाह के विविध अवसरों (लग्न, मंडप, मंढे, घुड़चढ़ी, वटैरी पाणिग्रहण) के समय इष्टदेव की पूजन आवश्यक है।

कन्या को यह हर समय याद रखने जरूरी हैं क्योंकि सिद्ध यन्त्र के समक्ष की हुई प्रतिज्ञा बहुमूल्य होजाती है।

सप्तपदी के समय वर के सात बचन।

१-ममकुटम्ब जनानां यथायोग्यं विनय शुश्रूषा करणीया।

मेरे कुटुम्बियों की यथा योग्य सेवा विनय आदर सत्कार करना,

Scanned by CamScanner

२—मम आज्ञा न लोपनीया ।

(मेरी आज्ञा को कभी भंग मत करना,)

३—कटुनिष्ठुर वाक्यं न वक्तव्यम् ।

कड़वा और मर्म भेदी वचन न बोलना

४—सत्पात्रादि जनेभ्यो ग्रहागतेभ्य आहारादि दाने कलुषितं मनो न कार्यम् ।

सत्पात्रादि-मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका आदि के घर आने पर दान देने में अपने मन को कलुषित न करना

५—रात्रौ परगृहे न गन्तव्यम् ।

रात को दूसरों के घर मत जाना ।

६—बहुजन संकीर्णस्थाने न गन्तव्यम् ।

जहाँ बहुत से आदमी एकत्र हो रहे हों ऐसे स्थान पर मत जाना ।

७—कुत्सित धर्मि मद्यपायिनां गृहे न गन्तव्यम् ।

जिनका आचरण और धर्म खराब है ऐसे मद्यादि पीने वालों के घर पर नहीं जाना ।

Scanned by CamScanner

इसी प्रकार कन्या के सात वचन वर को हर समय याद रखने ज़रूरी हैं।

१—अन्य स्त्रीभिः सह क्रीड़ा न करणीया।

अन्य स्त्रियों के साथ क्रीड़ा मत करना

२—वेश्यागृहे न गन्तव्यम्।

वेश्यादि खराब स्त्रियों के घर पर मत जाना।

३—द्यूत क्रीड़ा न कार्या।

जुआ नहीं खेलना।

४—सदुद्योगात् द्रव्यमुपार्ज्य वस्त्राभरणैः ममरक्षा करणीया

न्यायानुकूल उद्योग धन्दों से धन कमा कर मेरी रक्षा करना।

५—धर्म्मस्थान गमने न वर्जनीया।

जिन मन्दिर, जिन गुरु स्थान, तीर्थक्षेत्रादि धर्म-स्थान पर जाने से मत रोकना।

६—गुप्तवार्ता न रक्षणीया।

कोई बात मुझ से गुप्त मत रखना।

७—ममगुप्तवार्ता अन्याग्रे न कथनीया।

मेरी गुप्त बात दूसरे के आगे प्रकाशित मत करना।

Scanned by CamScanner

नव दम्पत्ति का कर्तव्य

विवाह के पश्चात् नव दम्पत्ति को चाहिये कि अपने कर्तव्य का अच्छी तरह ध्यान रखें, परस्पर प्रेम पूर्वक जीवन बितावें, स्वयं सदाचार से रहें, अपने कुटुम्बियों तथा आश्रितों को सदाचार के मार्ग पर लगावें, अपने बुद्धिबल, शरीरबल और धनबल को बराबर बढ़ाते रहें। कुटुम्ब में सब के दुख सुख का पूरा ख्याल रक्खें, दुखियों का दुख दूर करें। स्वयं कुसंगति से बचें और परिवार के लोगों को बचावें, अपने रज वीर्य का दुरुपयोग न करें। प्रायः सन्तान उत्पत्ति के खयाल से ही मैथुन करें, किसी व्यसन में न फंसें, अपनी सन्तान की तथा अन्य कुटुम्बियों की शिक्षा का समुचित प्रबन्ध करें, उनको धर्म के मार्ग पर लगावें, कुटुम्ब में एकता, सत्यता, समुदारता, दयालुता, गुणग्राहकता, आत्म-निर्भरता और सहनशीलता आदि गुणों का प्रचार करें। साथ ही ईर्षा, द्वेष, अदेखसका भाव आदि अवगुणों को हटावें, कुरीतियों को हटावें, धर्मप्रचार और समाज के उत्थान की बराबर चिन्ता रक्खें, फिजूल खर्ची न करें, परन्तु कृपण नहीं होवें, भगवान् जिनेन्द्रदेव द्वारा कहा हुआ गृहस्थ के छह कर्मों का सदैव पालन करने के लिये समय निकाल कर देव पूजन व सप्तक्षेत्रों में अपने धन का सदुपयोग करें। इस प्रकार सदैव प्रसन्नचित्त होकर दोनों अपने कर्तव्यका पूर्ण पालन करें। गृहस्थ जीवनको सुखी बनावें।

Scanned by CamScanner

स्त्रियों की शृंगार (लावनी) भजन

तुम सुनो सुहागन नारि कहूँ समझा के, इस भांति सत्य सिंगार करो मन लाके ॥ टेक ॥ एक जैन धर्म का दामन सुभग बनाओ, चोली सतसंगति रूप अङ्ग में लाओ । और शील चूंदरी ओढ़ जगत जस पाओ । लज्जा विवेक की चादर शीस चढ़ाओ, ऐसे सुन्दर कपड़े पहरो हर्षा के ॥ इस भांति० ॥ ॥ १ ॥ विद्या की सुन्दर झावर पहरो पग में, जिससे छम छम जस फैले सारे जग में, षट् काय जीव की रक्षा धारो मनमें । ऐसे छह बिछुवे पहरो पग उङ्गलिन में । वात्सल्य रूप छल्ले जञ्जीर लगा के ॥ इस भांति० ॥२॥ तुम सत्य वचन की चड़ी समझ लो बहनो । पर द्रव्य हरण के त्याग की पहुँची पहनो । निर्लोभ रूप कंकण की छवि क्या कहनौ, शुभ शिक्षा सुन्दर कड़े मनोहर गहनौ । गुरू भक्ति अंगूठी शुद्धाचरण जड़ा के ॥ इस भांति ॥३॥ सोलै कारण का हार गले में डालो, दश धर्म रूप माला बनवालो, द्वादश अनुप्रेक्षा चम्पाकली पुवा लो, वैराग्य रूप बिच में जुगनू डलवा लो । सम्यक्तरूप झूमर माथे लटकाके ॥ इस भांति० ॥४॥ तुम भेद ज्ञान साबन से मलो बदन को, समरस निर्मल जल से धो डालो तन को, इम करि स्नान पहरि वस्त्राभूषण को, मुख देखो ले करि तत्व ज्ञान दर्पण को । जिन वचन रूप अंजन को नयन लगा के ॥ इस० ॥५॥ इस विधि जे करें सिंगार नारि सतवन्ती, ते तीर्थङ्कर सम पुत्र जगत में जन्ती, करके समाधि जुत मरण देवतावन्ती, हो मनुष धारि तप घाति करम को हन्ती, "मक्खन" शिव पहुँचे केवलज्ञान उपाके ॥ इस प्रकार सत्य सिंगार करो ...